RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र./भोपाल/261/2018-20/पृष्ठ संख्या 44/प्रकाशन तिथि 26 अगस्त 2020/ पोस्टिंग तिथि 29 अगस्त

बाल विज्ञान पत्रिका, सितम्बर 2020

चकमक

मूल्य ₹50

1

छोटे बच्चों के लिए उर्दू किताबों का सेट

एकलव्य की जानिब से शाय शुदा 13 किताबों का एक खूबसूरत और निहायत अहम सेट बच्चों की लोक कहानियों, गीतों और खेलों का शानदार बातस्वीर मजमूआ।

क़ीमत सिर्फ ₹120(डाक खर्च अलग)

ऑर्डर करने के लिए pitara@eklavya.in पर राबता क़ायम कर सकते हैं या हमें फ़ोन कर सकते हैं +91 755 297 7770-71-72-73

*नोट: 20 सेट या उससे ज़ाएद(यानी अधिक) आर्डर पर डाक खर्च नहीं लिया जाएगा

https://www.pitarakart.in/Urdu_Kitabon_ka_Set

एकलव्य

अंक 408 • सितम्बर 2020

चकमक

इस बार

जब अँधेरे में रह जाते थे - रुद्राशीष चक्रवर्ती - 4

कार्बन - एक मज़ेदार तत्व - उमा सुधीर - 8

क्यों-क्यों - 11

मक्के के फूल - के आर शर्मा - 15

तुम भी बनाओ - भुट्टे की चाट - सजिता नायर - 17

पीली तितली - सिराज अहमद - 18

भूलभुलैया - 19

बारिश का मौसम - प्रीति - 20

चीड़ के पेड़ - गौरांशी चमोली - 23

किताबें कुछ कहती हैं - 24

तुम भी जानो - 26

बोरेवाला - जयश्री कलाथिल - 27

चमगादड़ करोड़ों वर्षों से वायरसों को गच्चा... - 31

मेरा पन्ना - 32

माथापच्ची - 38

चित्रपहेली - 41

ये है क्या? - आलोक कुमार मिश्र - 43

मेरी बात सुनो! - रोहन चक्रवर्ती - 44

आवरण चित्र: मानवी मुले, के जी टू, सैमीर्टन स्कूल, होशंगाबाद, मध्य प्रदेश

सम्पादन
विनता विश्वनाथन

सह सम्पादक
कविता तिवारी
सजिता नायर
कनक शशि

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

डिज़ाइन
कनक शशि

सलाहकार
सी एन सुब्रह्मण्यम्
शशि सबलोक

सहयोग
अभिषेक दूबे

वितरण
झनक राम साहू

एक प्रति : ₹ 50
वार्षिक : ₹ 500
तीन साल : ₹ 1350
आजीवन : ₹ 6000
सभी डाक खर्च हम देंगे

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चेक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण:
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
एकलव्य फाउंडेशन, जाटखेड़ी, फॉर्च्यून कस्तूरी के पास, भोपाल, मध्य प्रदेश 462 026
फोन: +91 755 2977770 से 3 तक; ईमेल: chakmak@eklavya.in, circulation@eklavya.in
वेबसाइट: https://www.eklavya.in/magazine-activity/chakmak-magazine

जब अँधेरे में रह जाते थे

रुद्राशीष चक्रवर्ती
चित्र: राही डे रॉय

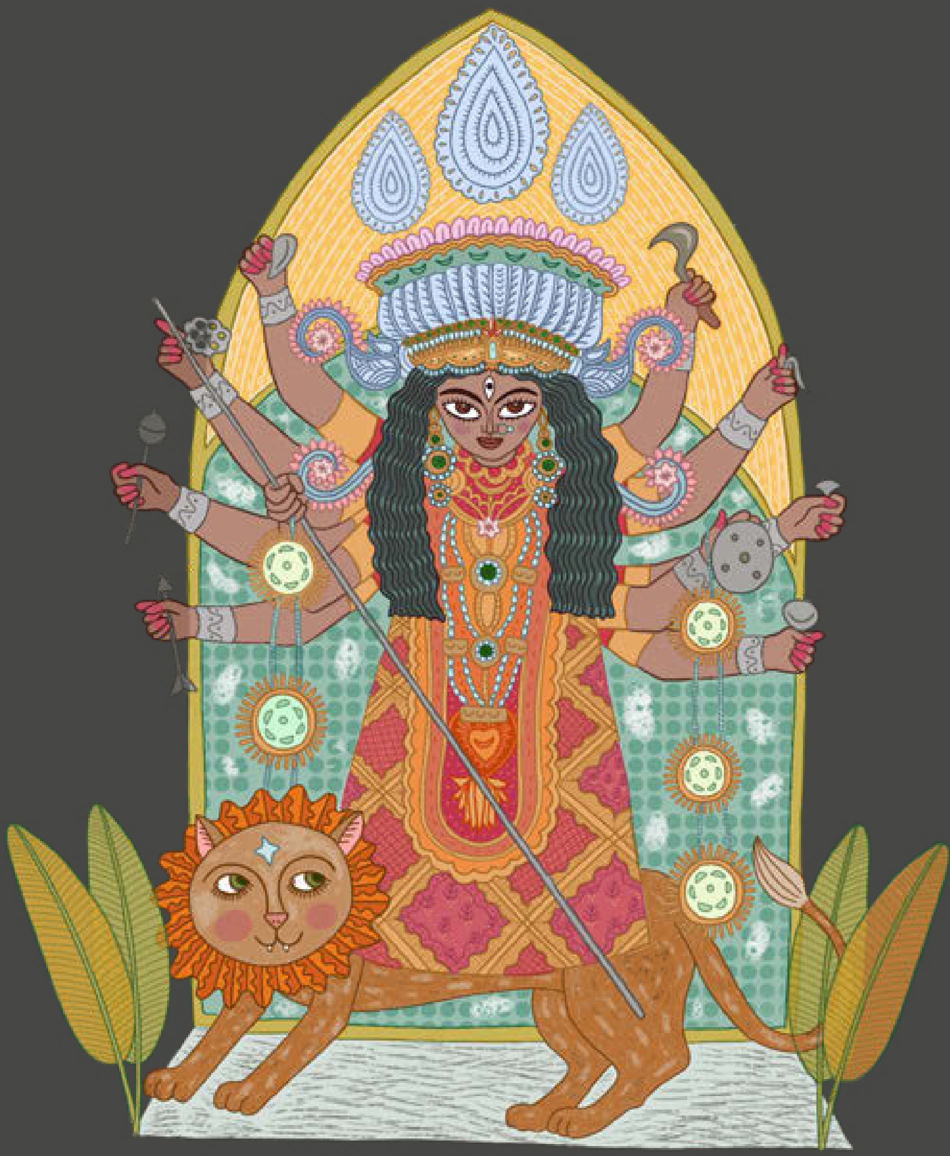

अक्टूबर की एक शाम की बात है। गुरुदास पार्क से सटी सड़क से बाईं ओर मुड़ते ही मुझे ऐसा लगा जैसे मैं एक दशक या उससे भी ज़्यादा पीछे के समय में लौट गया हूँ। कोलकाता में जिस मोड़ से मेरे मोहल्ले में मुड़ते हैं उसके शुरुआत में गुरुदास कॉलेज के सामने सात घरों की एक लाइन है। इसके एक छोर पर दूध की डेयरी और दूसरे छोर पर एक छोटा-सा सरकारी दवाखाना है।

उस शाम वो पूरा मोहल्ला अनजाना-सा लग रहा था। लेकिन साथ ही साथ जाना-पहचाना भी लग रहा था।

उस समय उस पूरे इलाके में बिजली नहीं थी। और मज़े की बात यह है कि यह दुर्गाष्टमी के दिन की बात थी। दुर्गाष्टमी यानी पश्चिम बंगाल में पाँच दिनों तक चलने वाली दुर्गा पूजा का तीसरा दिन। हर साल की तरह इस साल भी हमारे महल्ले ने दुर्गा पूजा का आयोजन किया था। त्यौहार के इन दिनों में पण्डाल में आने वाली भीड़ के मनोरंजन के लिए मेला भी लगा था।

लेकिन मुख्य पूजा पण्डाल और दुर्गा की मूर्ति के अलावा पूरे पार्क में अँधेरा छाया हुआ था। इन दोनों जगहों पर जनरेटर से जल रहीं कुछ छुटपुट बत्तियाँ जगमगा रही थीं।

मुझे याद नहीं कि दुर्गा पूजा के दौरान आखिरी बार हमारे मोहल्ले में बिजली कटौती कब हुई थी। सच कहूँ तो मुझे यह भी याद नहीं कि इसके पहले आखिरी बार हमारे मोहल्ले में बिजली कटौती कब हुई थी।

लेकिन दो दशक पहले जब मैं स्कूल में था तब ऐसा बिलकुल नहीं था। यहाँ तक कि एक दशक पहले जब मैं कॉलेज में था तब भी स्थिति एकदम अलग थी। उन दिनों रात-रात भर बिजली की कटौती होती। तब कोलकाता की उस भयानक उमस वाली गर्मी से खुद को बचाने के लिए मैं एक ही तकनीक अपनाता – सोने के लिए हाथ वाले पंखे से हवा करना।

मुझे लगता है कि नब्बे के दशक में कोलकाता में मेरे साथ बढ़े हो रहे अधिकांश बच्चे खुद को बचाने की इस तकनीक में माहिर थे। यह उस स्थिति पर मन की जीत थी। और शहर में रहने वाले मेरे साथ के अधिकांश लोग इसे भूल भी गए हैं। इनमें मैं भी शामिल हूँ।

पिछले कुछ सालों से हमारे महल्ले में बिजली की कटौती बहुत ही कम होती थी। और हर घड़ी साथ रहने वाला 'ताल पातार पाखा' (ताड़ के पत्ते वाला हाथपंखा) हमारे बिस्तर के बगल की मेज़ों से गायब होने लगा था। पहले के समय में बंगाली घर-परिवारों में ये पंखे इस कदर इस्तेमाल किए जाते थे कि घर के हर सदस्य के पास अपना एक अलग हाथपंखा होता था। और हम इन्हें इतना ज़्यादा इस्तेमाल करते थे कि कुछ ही हफ्तों में नया पंखा भी घिसापिटा लगने लगता था।

मुझे याद है एक बार मैंने इनके बारे में एक चुटकुला पढ़ा था, जो कुछ इस तरह था। दोपहर का समय था। बिजली की कटौती ने पहले से हो रही दम घोंटने वाली गर्मी को असहनीय बना दिया था। दो दोस्त ताज़ी हवा लेने की कोशिश करते बालकनी में बैठे बात कर रहे थे। उनमें से एक दोस्त हाथपंखे का इस्तेमाल कर रहा था। उसका दोस्त कुछ देर पंखे को देखता है और बोलता है, "यह पंखा तो काफी अच्छा लग रहा है।" पंखे का मालिक कहता है, "हाँ, ये तो है। मैंने इसे दो महीने पहले लिया था और तब से मैं लगातार इसे इस्तेमाल कर रहा हूँ। पर इसे देखकर ऐसा नहीं लगता, है ना? ये काफी मज़बूत है।" उसका दोस्त मुस्कराते हुए बोला, "इसमें कौन-सी बड़ी बात है। मैं अपने घर पर जो पंखा इस्तेमाल करता हूँ वह तो दस साल पुराना है।" "क्या

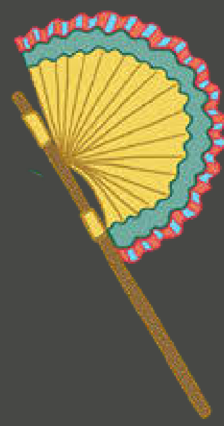
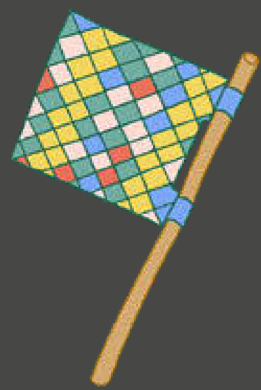

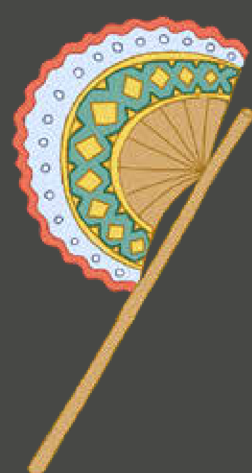

यार, क्यों मज़ाक कर रहा है?” “नहीं, सच में।” “पर यह कैसे हो सकता है?” “सीधी-सी बात है, मैं एक हाथ में पंखे को पकड़कर रखता हूँ और अपने सर को इधर से उधर घुमाता हूँ। तुझे पता है इससे मैं बड़ी जल्दी ठण्डा महसूस करता हूँ...”

घर पहुँचने पर मैं सीढ़ियों से ऊपर अपने कमरे में गया।

घर का पूरा पहला माला शरद ऋतु की शाम की ओझल होती हुई रोशनी से नहाया हुआ था। सभी कोनों से निकलता हुआ अँधेरा तेज़ी-से हर ओर फैल रहा था। कुछेक खिड़कियाँ खुली हुई थीं। उनसे भी अँधेरा ही झाँक रहा था। बाहर पेड़ों पर अपने घर लौटती चिड़ियों की चहचहाहट सुनाई दे रही थी। हमेशा से शाम के समय बिजली गुल होने पर हमारे मोहल्ले में यह जादुई असर दिखाई पड़ता था। बिजली की रोशनियों के खलल से दूर यह एक ऐसा समय होता जब लगता कि आँखों को थोड़ा आराम दें, और सारा काम अपने कानों को करने दें।

मैं पहले माले की अपनी बालकनी में गया और अपने मोहल्ले से गुज़रती गली को देखने लगा, जिसके दूसरे छोर पर कॉलेज है। अँधेरे ने पहले ही पूजा पण्डाल को अपनी गिरफ्त में ले लिया था। और तभी मुझे अचानक से एक बेंच की याद आई।

कुछ सालों पहले तक हमारी उस बालकनी में लकड़ी की एक बेंच हुआ करती थी ताकि बिजली गुल होने पर लोग वहाँ बैठकर ताज़ी हवा ले सकें। यदि बिजली की यह कटौती सूरज डूबने के बाद होती तो बालकनी की रैलिंग के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं देता। ऐसे में समय काटने का सबसे अच्छा तरीका होता अपने हाथपंखे की हवा का मज़ा लेते हुए किसी के साथ गपशप करना। ज़ाहिर है कि उस हाथ को इस मज़े का एहसास न होता जिसे पंखा झलना होता।

ऐसी कई शामों में मेरी माँ वहाँ बैठा करतीं। कई बार तो एक-एक घण्टे तक। मैं अक्सर उनके साथ बैठ जाया करता और उनसे उनके बचपन के दिनों की कहानियाँ सुनाने को कहता। इससे ज़्यादा खुशी उन्हें और किसी चीज़ से नहीं मिलती।

लेकिन अब वह बैंच घर के पीछे के किसी कमरे में उपेक्षित-सी पड़ी है। कई बार मैं उस पर अपने कपड़े रखा करता हूँ। लेकिन ना तो मैं उस पर बैठता हूँ, और ना ही माँ।

अचानक से मुझे सामने कॉलेज की बिल्डिंग की दीवाल पर सफेद रोशनी की एक चमक दिखाई दी। वह रोशनी हमारे बगल वाली बिल्डिंग की खुली हुई खिड़की से आ रही थी।